**ओ३म्**

**‘आर्य समाज के उर्दू साहित्य का संरक्षण व उसका हिन्दी अनुवाद’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

महाभारत काल के बाद लगभग 5000 वर्ष का समय भारत के धार्मिक एवं सामाजिक जगत के लिए ह्रास व पतन का था। ऐसे समय में महर्षि दयानन्द ने 10 अप्रैल, 1875 को मुम्बई में आर्य समाज की स्थापना की। महर्षि दयानन्द वेदों के पारदर्शी विद्वान थे और महाभारत काल के बाद वा विगत 5,000 वर्षों में भूमण्डल पर उत्पन्न हुए महान पुरूषों में अन्यतम थे। महर्षि दयानन्द के विचारों, मान्यताओं, शिक्षाओं व उनके द्वारा प्रचारित वेदों का प्रभाव यूं तो सारे देश व प्रकारान्तर से संसार पर हुआ परन्तु पंजाब में उनका प्रभाव देश के अन्य भागों से अधिक था। इसका अनुमान उन दिनों पंजाब में आर्य समाज, आर्य संस्थाओं, अनुयायियों एवं विद्वानों की संख्या से होता है जो कि अन्य स्थानों व राज्यों की तुलना में सर्वाधिक थीं। आर्य समाज के इन विद्वानों में हम लाला साईंदास के साथ स्वामी श्रद्धानन्द, पं. गुरूदत्त विद्यार्थी, पं. लेखराम, महात्मा हंसराज, लाला लाजपतराय, स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती, महाशय कृष्ण, महाशय राजपाल, मेहता जैमिनी जी, पं. चमूपति, मास्टर लक्ष्मण आर्य, पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय आदि को ले सकते हैं। पंजाब के अन्य विद्वानों एवं लेखकों की सूची भी काफी विस्तृत हैं जिन्होंने अनेक मौलिक ग्रन्थ उर्दू भाषा में लिखे हैं जिनमें से अधिकांश का अभी तक हिन्दी वा अंग्रेजी भाषाओं, जो आजकल प्रचलन में हैं, अनुवाद व प्रकाशन नहीं हुआ है।

**मनमोहन कुमार आर्य**

महर्षि दयानन्द के जीवन काल में पंजाब की बोलचाल व लेखन की भाषा मुख्यतः उर्दू-फारसी थी। अतः आर्य समाज के विद्वानों ने अधिकाशतः उस समय अपना लेखन कार्य उर्दू-फारसी में ही किया। पं. लेखराम जी, लाला लाजपतराय, स्वामी श्रद्धानन्द व महाशय कृष्ण जी एवं अन्य अनेक प्रमुख विद्वानों का साहित्य मुख्यतः उर्दू में ही है। स्वामी श्रद्धानन्द जी एवं महाशय कृष्ण जी आदि के **‘सद्धर्म प्रचारक’** व **‘प्रकाश’** आदि पत्र उर्दू में ही प्रकाशित होते थे। आर्य विद्वानों के लेख आदि भी उर्दू की पत्र पत्रिकाओं आदि में प्रकाशित होते थे। अतः धर्म, अध्यात्म, संस्कृति, समाज से संबंधित महत्वपूर्ण सामग्री इन उर्दू पुस्तकों एवं पत्र-पत्रिकाओं में विद्यमान है जो विलुप्ति के कागार पर है। आवश्यकता यह भी अनुभव की जा रही है कि आर्य समाज के उर्दू के विद्वानों की एक विद्वतमण्डली तैयार हो जो उपलब्ध प्रमुख उर्दू के पत्ऱ-पत्रिकाओं में से मुख्य मुख्य-विद्वानों के लेखों का संकलन कर उनका हिन्दी अनुवाद कर उनके संग्रहों का प्रकाशन करे। संस्कृत व हिन्दी-अंग्रेजी के युवा विद्वान भी यदि उर्दू सीखकर इस कार्य कों करें तो यह भी एक अच्छी सेवा हो सकती है। अभी तो उर्दू की पत्र-पत्रिकायें एवं पुस्तकें श्री राजेन्द्र जिज्ञासु जी के निजी पुस्तकालय, आर्य समाज के पुराने पुस्तकालयों व यत्र-तत्र व्यक्ति-विशेषों आदि के पास मिलनी सम्भव है परन्तु आर्य समाजों में जिस प्रकार की व्यवस्था व रखरखाव है, उससे अनुमान है कि यह बहुत समय तक उपलब्ध व सुरक्षित नहीं रह सकेंगी। इस ओर अभी हमारी सभाओं व संस्थाओं का ध्यान नहीं है। यह कार्य इन्हीं के द्वारा करणीय हैं। इसका एक कारण यह भी है कि यह कार्य अति श्रम एवं धनसाध्य है। दूसरी ओर तथ्य यह भी है कि आर्य समाज में समय-समय पर बड़े-बड़े आयोजन मुख्यतः सम्मेलन व समारोह आदि होते रहते हैं जिसमें बड़ी धनराशि व्यय की जाती है जो कि आयोजन के बाद एक प्रकार क निरर्थक हो जाती है। इसी प्रकार से बहुत सी समाजों व संस्थाओं का ध्यान भवन निर्माण पर हैं। इन्हें जो भी धन दान में मिलता है, उन्हें लगता है कि इसका सबसे अधिक उपयोग भवन निर्माण कर ही किया जा सकता है। यह स्थिति इस लिए उचित नहीं है इससे महत्वपूर्ण कार्य हमारे पूर्वज विद्वानों के साहित्य की रक्षा है जो कि हो नहीं रहा है। महर्षि दयानन्द ने लिखा है कि लुप्त वा अनुपलब्ध हुए साहित्य का मिलना प्रायः सम्भव नहीं होता। अतः प्राचीन उर्दू के उपयोगी एवं महत्वपूर्ण साहित्य की रक्षा उसके अनुवाद व प्रकाशन से ही हो सकती है। इस प्रकार विचार करने पर यह निष्कर्ष निकलता है कि दुलर्भ व अप्राप्य साहित्य का प्रकाशन आर्य विद्वानों, आर्य समाजों व सभा संस्थाओं का मुख्य कर्तव्य हैं।

विज्ञान ने आजकल साहित्य के संरक्षण के नये उपाय सुलभ करायें हैं। इनमें से एक यह भी है कि प्रकाशन के व्यय से बचने के लिए उर्दू पुस्तकों का हिन्दी अनुवाद कराकर उन्हें पुस्तक रूप में टाईप कराकर उनकी पीडीएफ तैयार कर सुरक्षित कर ली जाये। इसे सभाओं की वेबसाइट पर भी अपलोड किया जा सकता है जिससे देश-विदेश के लोगों को घर बैठे निःशुल्क ही यह उपलब्ध हो सकें। अभी किसी सभा, संस्था या आर्य समाज ने यह कार्य शुरू किया या नहीं, इसका हमें ज्ञान नहीं है। आशा है कि इस पर भी ध्यान दिया जायेगा और इस नई विधा का उपयोग कर दुलर्भ व महत्वपूर्ण कार्य के संरक्षण का कार्य किया जा सकता है। हिन्दी या अंगे्रजी की पुस्तकों की यदि पीडीएफ तैयार करनी हो तो इस कार्य में हम भी सहयोग कर सकते हैं बशर्ते कि किसी दुर्लभ, अप्राप्त व अतिमहत्वपूर्ण किसी पारदर्शी विद्वान की कोई कृति हो।

इस लेख में हम आर्यसमाज के उर्दू के विद्वानों से यह भी प्रार्थना करना चाहते हैं कि वह अपना कार्य धर्म भाव से करें। यदि स्वयं प्रकाशन करना हो तो अवश्य करें परन्तु भव्य व त्रुटिशून्य प्रकाशन करें और मूल्य कम रखे। अपने प्रकाशनों को आर्य समाज के प्रमुख प्रकाशकों के माध्यम से पाठकों को उपलब्घ करायें। कई विद्वान पुस्तक पर **‘सर्वाधिकार लेखक व प्रकाशकाधीन’** व **‘बिना लेखक की लिखित अनुमति के पुस्तक का कोई अंश उद्धृत न करें’** जैसे शब्दों का मुद्रण इंगित करते हैं। जब हम इस प्रकार की पंक्तियां पढ़ते हैं तो हमें मानसिक पीड़ा होती है। यह तो ठीक है कि दूसरा कोई व्यक्ति बिना नामोल्लेख सामग्री का उपयोग न करे परन्तु साभार महत्वपूर्ण सामग्री को उद्धृत करने का अधिकार तो आर्यसमाज साहित्य के उपयोगकत्र्ता सभी बन्धुओं को होना ही चाहिये। इससे मूल लेखक का यश भी बढ़ता है और अधिक लोग इससे लाभान्वित भी होते हैं। दूसरी बात यह है कि यदि किसी लेखक व विद्वान द्वारा पुस्तक प्रकाशित होकर इसके प्रकाशक व पुस्तक विक्रताओं के पास उपलब्ध है, तो किसी अन्य प्रकाशक को उसका नया संस्करण नहीं छापना चाहिये। यदि पूर्व संस्करण पूरा समाप्त हो गया है तो इसके लेखक व पूर्व प्रकाशक का कर्तव्य है कि वह या तो कम मूल्य पर स्वयं प्रकाशित करे या फिर किसी प्रकाशक, जो उसे प्रकाशित करना चाहता है, बिना लोभ की भावना के प्रकाशन की सहर्ष अनुमति दें। आजकल तो यह हो रहा है कि प्रकाशक द्वारा लेखक से ही कई बार प्रकाशन के पूरे या आंशिक व्यय की अपेक्षा की जाती है। ऐसी स्थिति में अच्छे व नये साहित्य के सृजन में अनेक बाधायें खड़ी हो गई हैं जिसकी ओर आर्यसमाज में किसी का भी ध्यान नहीं है। हम यह भी समझते हैं कि जो लेखक अपनी महत्वपूर्ण कृति का स्वयं प्रकाशन करते हैं उससे आर्यसमाज को यह हानि होती है कि विद्वान लेखक का अधिक समय प्रकाशन कार्य में ही लग जाता है और समाज व देश उस विद्वान लेखक के नये साहित्य सृजन के कार्यों से वंचित रहते हैं अथवा लेखक की कार्य क्षमता प्रकाशन कार्यों में संलग्न होने पर घटने से नये साहित्य के सृजन के मार्ग में बाधायें आती है। प्रवर विद्वान लेखकों को इस प्रश्न पर भी विचार करना चाहिये। यह जीवन ईश्वर की अनमोल देन है। आयु बढ़ने और मृत्यु का समय आने पर तो सबको यहां से जाना ही है। हमारे जाने के बाद हम कितना भी पैसा छोड़ जाये वा अन्य बातों का इनता महत्व नहीं है। महत्व इस बात का है कि हम जिन विद्वानों के साहित्य से कृत्यकृत्य हुए हैं, क्या हमने भी प्रत्युपकार हेतु उतना ही साहित्य सृजन कर अपना ऋण उतारा है?

आर्य जगत में इस समय एक ही विद्वान हैं प्राध्यापक श्री राजेन्द्र जिज्ञासु। इन्हें उर्दू व उर्दू साहित्य का तलस्पर्शी ज्ञान है। इनका अपना पुस्तकालय भी उर्दू साहित्य से काफी समृद्ध है। इन्होंने उर्दू पत्र पत्रिकाओं का उपयोग कर नये ग्रन्थों के सृजन के साथ उर्दू पुस्तकों का अनुवाद करके आर्यसमाज की प्रंशसनीय सेवा की है और आर्य समाज में अपना अमर स्थान उत्पन्न किया है। अभी हमें उनसे बहुत आशायें हैं। हम चाहते हैं कि वह अपनी गतिविधियां व अन्य व्यस्ततायें कम करके उर्दू के महत्वपूर्ण ग्रन्थों की सूची प्रकाशित करें जिनका संरक्षण व अनुवाद आवश्यक व उपयोगी हो सकता है। हम यह भी अपेक्षा करते हैं कि वह प्राथमिकता के आधार पर अनुवाद का कार्य जारी रखें जिससे नई पीढ़ी को अधिकाधिक दुर्लभ व अप्राप्य साहित्य मिल सके। श्री जिज्ञासु परोपकारिणी सभा, अजमेर के भी सम्माननीय विद्वान हैं। वहां वह गुरूकुल के बड़े विद्यार्थियों में उर्दू का अध्ययन कराने की भी यदि व्यवस्था करा दें तो आने वाले समय में हमें उर्दू के अनेक विद्वान मिल सकेंगे जो उनके कार्य को आगे बढ़ायेगें जिससे आर्य समाज का उर्दू साहित्य आज की आवश्यकता के अनुरूप हिन्दी में उपलब्ध होकर साहित्यप्रेमियों को लाभ पहुंचायेगा। क्या परोपकारिणी सभा और प्रा. जिज्ञासु जी हमारे इस निवेदन पर एक दृष्टि डालने का कष्ट करेंगे? हम ईश्वर से प्रार्थना और कामना करते हैं कि श्री जिज्ञासु जी शतवर्ष व उससे अधिक समय तक स्वस्थ, अदीन व क्रियाशील जीवन प्राप्त करें। आर्यजगत के शिरोमणी विद्वान महत्वपूर्ण-उर्दू-आर्य-साहित्य के संरक्षण व अनुवाद के कार्य से सबंधित ठोस योजना बनाने में अपनी भूमिका निभायें, ऐसी हम अपेक्षा करते हैं।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**

**eueksgu dqekj vk;Z**